



नई दिल्ली
अंक 133

श्री साई शक 33
नवम्बर – 2014

॥ ॐ श्री साईनाथाय नमः॥

॥ ॐ श्री सद्गुरुनाथ दादाय नमः॥



Publisher

Sri Saikalp Adhyatm Sanstha
“Sai Niketan”
New Delhi - 110025
Ph. : 26956561

E.mail : saikalp@gmail.com
dadab6@gmail.com
Web : saishraddha-world.com



Patron

Lalita Bhavani Shankar Bhatte



Editorial

Vijay Kumar Varma
Jogesh Grover



Subscription

Inland
Yearly : Rs.250.00
Life time : Rs.1000.00



Overseas

Yearly : US\$ 250.00
Life time : US\$ 500.00



Printed By

Shaarp Advertising
Cell : 09810284136



Published Every Month

©All rights reserved with Publisher

प्रपंच—परमार्थ

गुरुबंधुभगिनीयों से

हमारे इस गुरुमार्ग में, प्रपंच और परमार्थ में योग्य संतुलन स्थापित करके जीवन समाधानी होकर व्यतीत करना सिखाया जाता है। अब इस में पहला सवाल यह है कि प्रपंच याने क्या? और परमार्थ का मतलब क्या होता है?

पुरातन काल में परमार्थ साध्य करने के लिए व्यक्ति सन्यास लेते थे या प्रखर तपस्या करते थे। परन्तु आज की स्थिति और परिस्थिति बदल गई है इसलिए वंदनीय दादाजी ने गुरुशक्ति से अवस्था में बदलाव करके परमार्थ का स्वरूप बदल दिया, जिससे संसारी व्यक्तियों को भी आसानी से परमार्थ का लाभ हो सके। परमार्थ का मतलब है जीवन का परम अर्थ। जब जीवन सिर्फ खुद के लिए व्यतीत होता है, वह 'स्वार्थ' होता है; इसलिए प्राप्त जीवन का असली मायने में अर्थ समझकर गुरुकृपा से उसका उपयोग औरों के लिए, दुनिया के लिए करना याने परमार्थ। निसर्ग नियम के अनुसार प्राप्त जीवन का केवल 25 प्रतिशत भाग खुद के लिए और 75 प्रतिशत भाग दूसरों के लिए व्यतीत करना होता है। इसीलिए प्रपंच और परमार्थ साथ-साथ जीना पूर्ण रूप से सदउपयोगी करना जरूरी है।

हम दुनिया में देखते हैं कि कई साधक, साईबाबा का फोटो रखकर लोगों को भूत-भविष्य बताते हैं। उनमें से कुछ ही लोग सच्चे मायने में लोगों की तकलिफें समझते होंगे, बताते होंगे या कुछ हद तक या कुछ समय तक लोगों की तकलीफें दूर करते होंगे, लेकिन अगर हमने उनको पूछा की हमें भी अपना विकास करने के लिए या साधक अवस्था प्राप्त करने के लिए कोई उपासना बताईये तो वे नहीं बता सकते। उसी प्रकार संसार में कई लोग योगा या प्राणायाम सिखाते हैं, जिससे मन, शांति वाकई (Actually) मिलती होगी, लेकिन उनको अगर कोई दुःख निवारण करने के लिए निराकरण पूछा तो वे

नहीं कर सकते। वंदनीय दादा जी ने स्थापना: किया हुआ यह गुरुमार्ग अपनी प्रांपचिक तकलिफें दूर करके हमें पारमार्थिक उच्चावस्था प्राप्त करके दे सकता हैं याने यह गुरुकृपा हमारी परवरीश भी करता है और हमें परवरदीगार तक भी पहुँचा सकता है। यही एक ऐसा मार्ग इस जगत में आज सिद्ध है।

पुरातन काल में परमार्थ में प्राप्त हुई विद्या भ्रष्ट न हो जाये इसलिये ऋषी-मुनी, साधक सन्यास लेकर वैराग्य में जीवन व्यतीत करते थे। वंदनीय दादाजी ने आज के समय के अनुसार पारमार्थिक विद्या की अवस्था बदल दी, जिससे आज गुरुकृपाशीर्वाद के माध्यम से सेवक के माध्यम से प्रवाहित होने वाली गुरुशक्ति उस समय की जरूरत के हिसाब से प्रवाहित होती है। जिस प्रकार नौकरी या धंधा करने वाले व्यक्ति की रोजाना की कृपा दफ्तर में और घर में बदलती है, याने दफ्तर में एक व्यक्ति अलग काम, अलग तरीके से करता है और घर में उसका बर्ताव अलग तरीके का होता हैं उसी प्रकार सेवक की अवस्था से गुरुशक्ति का स्वरूप गुरुकार्य करते समय या परमार्थ करते समय अलग होता है और प्रपंच करते समय गुरुशक्ति अलग स्वरूप से और Intensity से कार्यान्वित होती है। यह प्रपंच और परमार्थ के बीच Transformation होने में उदी, हल्दी-कुम-कुम, प्रार्थना, आसन, ऊँकार साधना सदगुरुनामःस्मरण, आदि मदद करते हैं।

बाहर के जगत में साधक, भक्तों की गिनती बढ़ाने के लिए या धन की प्राप्ति करने के लिए सिद्धि का उपयोग करते हैं याने ईश्वर की शक्ति आह्वान होकर प्रवाहित होते समय उसमें कोई स्वार्थ या विषय अंतर्भूत करते हैं, जिससे वह शक्ति धारण होने वाले भक्तों को उस विषय से संमोहीत (Influence) करती है, जिससे लोक संग्रह और धन की प्राप्ति आदि बहुत होती है। लेकिन इससे ईश्वरीय शक्ति भ्रष्ट हो जाती है जो कि ईश्वर की नजरों में यह प्रमाद है। हम संसार में इस प्रकार के कार्य देखते हैं, जहाँ लोक संग्रह, धन-सम्पत्ति काफी मिलती है, लेकिन कार्य की नींव पक्की/पवित्र न होने के वजह से, वहाँ चोरी, खून, रेप आदि अनुचित प्रकार से होते हैं।

अपने इस गुरुमार्ग की नींव एकदम पवित्र और पक्की है। वंदनीय दादाजी ने कार्य के आरम्भ के समय में कितनी भी तकलीफें होने के बावजूद आने वाले किसी भी भक्त को बाबा के सामने, अनुचित स्वरूप से कमाया हुआ एक रुपया भी नहीं रखने दिया। वंदनीय दादाजी की हमेशा यही बात सिखलाई थी कि गुरुमार्ग में पाप से कमाये हुए लाखों रुपये से ज्यादा कितनी मेहनत के या अल्प बचत करके बचाये हुए दस रुपये होते हैं। वह दस रुपये भी किसी का जीवन बना सकते हैं। उसी प्रकार लोक संग्रह करना यही सिर्फ उद्देश्य वंदनीय दादाजी का नहीं था, वे कहते थे कि, "I dont want followers, I want fellowme"।

प्रपंच और परमार्थ में तीन तत्व होते हैं, ब्रह्मा, विष्णु और महेश। याने उत्पत्ती, स्थिती, लय।

प्रपंच में उत्पत्ती, स्थिती और लय अवस्था याने पहली उत्पत्ती अवस्था याने सरस्वती/विद्या मतलब शिक्षा प्राप्त करना। फिर दूसरी स्थिती याने लक्ष्मी मतलब पैसा कमाना। इसीलिये हम शिक्षा प्राप्त करके नौकरी धंधा करके धन कमाते हैं। लेकिन तीसरी अवस्था तक नहीं पहुँच पाते। तीसरी अवस्था याने लय, मतलब पूर्णत्व या समाधान। आज संसार में यह समाधान नहीं दिखता क्योंकि विद्या के बाद लक्ष्मी की प्राप्ति होने पर उस लक्ष्मी का योग्य लाभ होने के लिए फिर विद्या याने सरस्वती का होना अवश्यक होता है। वह विद्या यानी पारमार्थिक ज्ञान। वह ज्ञान मिलने पर यानी जीवन का ज्ञान समझने पर प्रांपचिक अवस्था की तीसरी अवस्था याने 'लय' अवस्था का लाभ होकर समाधान की प्राप्ति होती है और उसी के साथ पारमार्थिक अवस्था की पहली अवस्था – उत्पत्ती – का आरम्भ होता है। इस उत्पत्ती अवस्था में उस व्यक्ति को ईश्वरीय गुरुमार्ग की पहचान होने लगती है और वह नियमित स्वरूप से उपासना करने लगता है।

पारमार्थ की दूसरी अवस्था याने साधक अवस्था का आरम्भ होना। उस स्थिती अवस्था में ईश्वरीय शक्ति या गुरु शक्ति उस व्यक्ति के माध्यम से कार्यान्वित होने लगती है। जब आसपास के लोग उस व्यक्ति को मानने लगते हैं उस समय सबसे महत्वपूर्ण बात है अपना संतुलन संभालना और जो प्राप्ति हुई है वह गुरुकृपा से हुई है इस बात की पहचान (याद) और गुरु के उपकारों का एहसास हमेशा रखना। इसके आगे परमार्थ की तीसरी

अवस्था याने 'लय' अवस्था में वह व्यक्ति गुरुरूप होकर विषयों की आसक्ति पूरी तरह दूर होकर त्याग की भावना कण-कण में मिलती है।

आज संसार में जो देवदेवतार्जन, पूजा पाठ किया जा रहा है वह सिर्फ क्रिया स्वरूप हो गया हैं इससे मन पर संस्कार नहीं होता और न कोई सद्कर्म की निर्मिती हो रही हैं यह परिस्थिति देखकर वंदनीय दादाजी ने इस गुरुमार्ग में आरती साधना, ऊँकार साधना इस प्रकार सिद्ध की है, जिससे आने वाले भक्तों के मन पर संस्कार हो। इसलिये हमें समाधान का अनुभव आरती में या साधना में आता है। मुलाकात साधना के दौरान भी जो कुछ भी बोला जाता है, उसका उद्देश्य मन का विकास यही होता है। इस मार्ग में सभी भक्तों की अवस्था एक समान हैं कोई भक्त गुरु का ज्यादा लाड़ला या कोई पराया नहीं हैं सभी व्यक्ति गुरु के अपने हैं इसलिए गुरु माध्यम से जो कुछ जिस व्यक्ति को बोला जाता है वह उस व्यक्ति के मन के विकास के लिए होता है। उसे समझकर खुद का विकास कर लेना हमारा काम है।

मन का विकास हो गया तो प्रपंच और परमार्थ संतुलित हो सकता है। हमें लगता है कि प्रपंच याने अपना परिवार और परमार्थ दुनिया के लिए है। वंदनीय दादाजी ने बताया था कि, प्रपंच और परमार्थ कहीं बाहर नहीं है तो ये दोनो अपने अंदर ही होते हैं। अगर हमने हमारे माता-पिता, भाई-बहन, पति-पत्नी या बच्चों का नाम लिया तो हमारे मन में उनके प्रति एक भावना व्यक्त होती हैं उसी प्रकार संसार के किसी दूसरे व्यक्ति का चीजों का नाम लिया तो भी हमारे मन में उस व्यक्ति या उन चीजों के प्रति विचार और भावना प्रकट होती है, जो कि हमारे अनुभव, बुद्धि या किसी सुना हुआ अनुभव या पढ़ी हुई किताबें, आदि के वजह से होती है हमारे पहचान का वह व्यक्ति याने उस व्यक्ति की व्यक्त अवस्था और उस व्यक्ति का जो **Impression** हमारे मन में होता है, वह उस व्यक्ति की अव्यक्त अवस्था होती है। प्रपंच या परमार्थ याने वह दुनिया जो अव्यक्त रूप से हमने हमारे मन में बसाई है। इनमें से जो व्यक्ति या विषय हमारे मतलब के होते हैं या हमें लगता है कि उन पर अपना अधिकार है, वह अपना प्रपंच है। आज हर एक व्यक्ति दुनिया को अपनी खुद के नजरीये से याने अपने मन के अव्यक्त अवस्था से देखता है और अपेक्षा, विषय, वासना उत्पन्न करता हैं इसलिए औरों के बर्ताव से वह दुःखी, असमाधानी होता है। यह जो प्रपंच हमने अपने देह के अंदर बनाया है उसका परमार्थ होना याने उस अव्यक्त अवस्था में जो भी **Impresion** हमारे मन में है उनके प्रति अच्छा (**Positive**) विचार, अच्छी भावना उत्पन्न होना। अपने मतलब के विचार, विषय, वासना, अपने अधिकार के विचार निकल जाना। गुरुकृपा से सबका भला हो यही विचार दृढ़ होना याने "प्रपंच हा परमार्थ जाहला"। ऐसा हो गया तो जो भी जीवन में पहले प्रपंच हम मान रहे थे वह सिर्फ घटनाओं का अनुभव मतलब 'व्यवहार (ऋणानुबंधो का) था, जो अब शांति से, अंतरमन की शांति से भर गया। इसीलिये "प्रपंच हा परमार्थ जाहला, व्यवहार हा शांति ने भरला"।

पुराने लोग कहते थे कि उपासना या तपस्या करके मरने के बाद मुक्ति मिलती है। वास्तव में "मुक्ति" यह अवस्था जिंदा रहते हुए अनुभव करनी होती है। अगर देह नहीं होगा तो उस अवस्था का अनुभव कैसे होगा। 'मुक्ति' याने जिन विषयों का उपभोग हमने अपने जीवन में लिये, उन विषयों के प्रति आसक्ति या वासना न करना। मतलब उन विषयों से अपना माध्यम मुक्त होना याने 'मुक्ति'। सिर्फ उपासना या भक्ति से मुक्ति नहीं मिलती तो देह की भूख गुरुशक्ति के अनुभव से धीरे-धीरे कम होती है। हमें अपनी भूख सबसे महत्वपूर्ण लगती हैं देह की भूख को मुक्ति कहते हैं, जिसमें अन्न, विषय, वासना का अंतर्भाव होता हैं जो भूख आत्मा को लगती है उसे भक्ति कहते हैं। भक्ति से देह की भूख याने विषयों के प्रति आसक्ति कम होती है। तब प्रपंच का परमार्थ होता है और 'मुक्ति' अवस्था का अनुभव आता है।

परमार्थ याने निसर्ग के तरह रहना, बर्ताव करना। निसर्ग में अनेक फलों के, फूलों के पेड़ हम देखते हैं। उन पेड़ों को हम कभी अच्छा, कभी खराब पानी भी डालते हैं। गंदा बाँस आने वाला खाद, **Fertiliser** डालते हैं। मिट्टी में अनाज उगता है लेकिन इन फलों या फूलों में उस खाद का बाँस या टेस्ट नहीं आता। गाय सूखा चारा खाती है, कभी खराब सब्जी खाती है लेकिन हमेशा शुद्ध सात्विक दूध देती है। उसी प्रकार परमार्थ अवस्था में जीते समय, आसपास कितनी भी प्रतिकूलता क्यों न हो, हमारे आसपास अनेक विषय हो, उनकी धारणा हो,

लेकिन व्यक्त करते समय हमेशा हमारे माध्यम से गुरुशक्ति व्यक्त हो। ओरों के बुरे अनुभव भी आये तो भी हमारी जुबान हमेशा अच्छाई व्यक्त करे। जो बुरा अनुभव है, उसे विसर्जन करना है।

साधक अवस्था में जो सबसे महत्वपूर्ण माध्यम है, वह है जीभ याने **Toung** (जुबान) हमारे देह में उन्नीस माध्यम होते हैं, जिनमें से चौदह माध्यम जुबा से लगकर होते हैं। जैसे कि पंचमहाभूत तत्व—पृथ्वी, आप, तेज, वायु और आकाश जुबान को लगकर होते हैं। उसी प्रकार देह के सभी हार्मोन्स जुबान के हार्मोन्स के साथ लगकर होते हैं यही कारण से शास्त्रों में श्लोक पठण या ऊँकार साधना में मारुती स्रोत (भीमस्पी) का अंतर्भाव किया गया, जिसके उच्चार करने से जुबान के हार्मोन्स जागृत हो और उनसे जो संलग्न है, वह देह के सभी हार्मोन्स जागृत हो। याने पंच तन्मात्र—गंध, रस, रूप, स्पर्श, शब्द यह सभी जुबान से सम्बन्धित होते हैं। इन्ही के साथ बुद्धि, मन चित्त और अहंकार भी जुबान से सम्बन्धित होते हैं। प्राथमिक अवस्था में बुद्धि में विचार आया तो तुरन्त हम जुबान से व्यक्त करते थे लेकिन जैसे—जैसे विकास होगा तब हम यह सोचेंगे कि यह विचार कब और किस प्रकार व्यक्त करना है, जिससे उसका लाभ योग्य स्वरूप से होगा। इस अवस्था में मन की धारणा होती है, तब विचार, मनन, फिर जुबान से व्यक्त करना यह स्वरूप होता है। चित्त अवस्था में श्री गुरु के प्रति निष्ठा और दृढ़ विश्वास व्यक्त होता है और अहंकार याने गुरु का आकार हमारे माध्यम से साकार होना। फिर भी कार्य जुबान के माध्यम से होता है।

इस प्रकार अपने देह के उन्नीस में से चौदह माध्यम जुबान को लगकर होते हैं उसी हिसाब से हम जो कुछ बोलते हैं उसका परिणाम अपने खुद के देह पर काफी ज्यादा होता रहता है। इसीलिये गुरुमार्ग में उच्चार अति महत्वपूर्ण होता है।

श्री गुरु ने हम पर ऐसी कृपा की है कि इस गुरुमार्ग में हमारा विकास होते समय से ही श्री गुरु, हमारे माध्यम से गुरुकार्य करना शुरू कर देते हैं। वंदनीय दादाजी ने कहा था कि ईश्वर की प्रेरणा हमारे माध्यम से व्यक्त होना याने **Echo** और **Echo** तभी आता है जब हम अपना **Ego** निकाल दे।

No ego - Echo of Guru

यही स्वरूप से प्रपंच और परमार्थ, श्री गुरुकृपा से हम सभी के जीवन में संतुलित हो और असली माईने में हम जीवन जी सके, यही वंदनीय दादा और परम् पुज्यनीय बाबा के चरणों में प्रार्थना है।

॥ शुभम् भवतु ॥

जनम जनम का सेवक

विनम्र निवेदन

अति हर्ष के साथ आप सभी गुरुबंधु एवं भगिनियों को सूचित किया जाता है कि मासिक पत्रिका "तत्व बोध" का आगामी अंक एवं अन्य सूचना वेबसाइट पर एवं मेल द्वारा प्रेषित की जाएगी। अतः आप सभी गुरुबंधु एवं भगिनियों से अनुरोध है कि आप सभी अपना ई-मेल पता एवं अन्य जानकारी यथाशिघ्र निम्न पते पर प्रेषित करें :

Sri Saikalp Adhyatm Sanstha

"Sai Niketan"

5, Jasola Vihar, New Delhi - 110025 Telephone : 26956561

E-mail : saikalp@gmail.com, dadab6@hotmail.com

Please send your yearly subscriptions as early as possible